International Journal of Sociology and Political Science
www.sociologyjournal.in
Online ISSN: 2664-7745, Print ISSN: 2664-7737
Received: 25-04-2022, Accepted: 11-05-2022, Published: 26-05-2022
Volume 4, Issue 1, 2022, Page No. 44-46

भारत में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का एक विश्लेष्णात्मक अध्ययन

ममलेश कुमावत
पीएचडी शोधार्थी, डॉ. बी आर अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, डा. अम्बेडकर नगर, महू, मध्यप्रदेश, भारत

सारांश
इस प्रस्तुत शोध आलेख में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का अध्ययन किया गया है, जिस तरह महिला की सहभागिता के बिना एक परिवार की इकाई की कल्पना करना बमुश्किल ही नहीं बेबुनियाद भी है। इससे स्पष्ट होता है कि महिलाओं का न केवल प्रतिनिधिक सहभागिता/उदारता की जरूरत है बल्कि अहं निर्णय लेने में उनकी भूमिका का भागीदारी की सुनिश्चितता में मानव सभ्यता के विकास की परिधि केन्द्र है। इसलिए इस शोध–पत्र में सामाजिक सहभागिता, आर्थिक सहभागिता, सांस्कृतिक सहभागिता, धार्मिक सहभागिता के अलावा राजनीतिक सहभागिता का दुनिया में महिलाओं की भागीदारी की वैसी स्थिति नहीं है, जिस तरह की पुरूष के साथ कंधा से कंधा मिलाकर अपनी भागीदारी को चुनौती देती है। एक तरफ़ पुरूष–प्रधान सभ्यता, पुरूषों की राजनीतिक व्यवस्था में कभी स्त्रियों के अहंकार को अन्य व्यवस्था सहभागिता की तुलना में राजनीतिक सहभागिता के रूप में कभी भी उनका स्वभाविक पक्ष रखने के लिए कभी भी काबिल नहीं समझा। ''इतिहास में कभी स्त्रियों का धर्म नहीं है, न ही कोई कोरी कल्पना है''। यदि कुछेक अपवाद को छोड़ दिया जाये तो महिलाएं पूरी दुनिया से उपेक्षित होने का इतिहास गवाह है। भारतीय संविधान अनोख़ा उदाहरण प्रस्तुत करता है। पश्चिमी देशों ने महिलाओं को अधिकारों से वंचित रखा। आज संविधान में सभी प्रभुत्व मौलिक अधिकार प्राप्त हों भले ही परिवार की इकाई हैं। लेकिन उन्हें निर्णय की सहभागिता में पंच–पंचायतों के निर्णयों से अलग–थलग हैं, इसके उदाहरण को संविधान सभा में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता को देख़ा जा सकता है। जबकि 17वीं लोक सभा में 14 प्रतिशत महिलाए ही संसद में पहुँच सकी है।

मूल शब्दः आरक्षण सहभागिता, भारतीय संविधान, राजीतिक सहभागिता

प्रस्तावना
एक आर्दश कानून की कल्पना करने में महिलाओं की एक अलग ही दुनिया है। फातिमा शेख, सावित्री बाई फुले, रमाबाई पंडिता, 19वी शताब्दी की पहली महिलाओं की पीढ़ी थी, जिन्हे पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। फातिमा शेख मुस्लिम सम्प्रदाय की इकलौती बानगी थी, जिन्होंने महिलाओं के राज्य का कल्पना थी। महिलाए एक आर्दश राज्य स्थापित करने के योग्य है। इससे पता चलता है, अस्पृश्य समाज़ से सावित्री बाई फुले पहली महिला थी, जिनके पति ने पढ़ाया–लिखाया और महत्वपूर्ण निर्णयों में महिलाओं के पक्ष को परिचित कराया, जैसे बाल–विवाह, विधवा–विवाह व महिलाओं के दुख–दर्द को समझा। जबकि रमाबाई ब्राम्हणों इतिहास में भले ही काल्पनिक–कथाओं में अनेक नाम मैत्रेयी जैसे गिने जाते हों पर वास्तविकता यह है कि महिलाओं को न केवल शिक्षा से दूर रखा गया बल्कि धार्मिक ग्रन्थों को छूने के प्रति 'पवित्रता' जैसी रूढ़िवादी मान्यताएं विद्यमान थी। उस समय पूना में महात्मा फुले के आन्दोलन ने ब्राम्हणों को भी परिवर्तन होने के लिए प्रेरित किया था। तिलक जैसे लोगो ने पहली बार रमाबाई को संस्कृत पढ़ने का ब्राम्हण इतिहास में अवसर सुनिश्चित किया था। इसके पहले अतीत मे नज़र डाले तो महिलाओं की शैक्षणिक भागीदारी का पता ही नहीं है। यहाँ तक कि महान समाज सुधारक बुद्व ने संघ में शामिल होने में महिलाओं को वंचित रखा था। इसके पीछे कितने भी महान तर्क क्यों न हो पर वस्तुतः महिलाओं की भागीदारी में यह महिलाओं के मौलिकता पर हाशियाकरण का पहला उदाहरण मिलता है। उसी तरह पौराणिक–पुरान –कथानाकों में गार्गी/मैत्रेयी का नाम लेकर पुरूष–प्रधान समाज़ अपने को जिस तरह बचाव पक्ष देता है। वह न तो अपवाद है, न उपेक्षा है, न सहभागिता है। 19वीं सदी के पहले जिन स्त्रियों महिलाओं को बाजारों में गुलामों की तरह बेचा जाता था वह समाज इसे स्त्रियों की सहभागिता का उदाहरण ढूढ़ने में भी वही अमानवीय फरेब़ गलती कर रहें हैं, जिसे स्त्रियों ने सदियों से उसमें जीकर हजारों पीढ़िया गुजार दी हैं। इसका एतिहासिक विश्लेषण करने पर महिलाओं का सहभागिता का कोई भी आर्दश उदाहरण नहीं मिलता है, जिसे पुरूष–प्रधान सभ्यता प्रस्तुत कर सके।

शैक्षणिक सहभागिता
जिस मानव सभ्यता में स्त्रियों को वस्तु भोग के उपर समझा ही नहीं गया हो, उनके हक–अधिकार की बातं इतिहास में ढूढ़ना मुश्किल ही नहीं बमुश्किल चुनौती है। जिस चुनौती का सामना करने के लिए एक–एक उदाहरण 19वीं सदी में ढूढ़ने पर नामचीन के तौर पर मिलते हैं। 20वीं सदी की आधुनिकता ने महिलाओं/लड़कियों को शैक्षणिक सहभागिता में समान अवसर की अवधारणा को संवैधानिक प्रारूप मिलता है। यदि सार्वभौमिक शिक्षा की संकल्पना में एतिहासिक दृष्टि डाले तो चीन पहला राज्य है, जिसने शिक्षा की सहभागिता में राज्य के नागरिकों को सौर्वभौमिक अधिकार दिया था। इसी तरह पाश्चात्य देशों के इतिहास में कोई आर्दश उदाहरण नहीं मिलता है। प्लेटों की शिक्षा पद्वति में महिलाओं को शामिल

किया गया है लेकिन अरस्तू ने महिलाओं को शैक्षणिक सहभागिता से वंचित रखा था क्यों कि वह महिलाओं को दास की श्रेणी में रखता था। रूसों ने 'द इमाइल' में महिलाओं को सिर्फ कढ़ाई, बुनाई व रसोई की शिक्षा देने तक सीमित थे। उसी तरह भारत के ब्राम्हणीय शिक्षा पद्वति में शूद्रों व महिलाओं को शैक्षणिक सहभागिता से वंचित रखा।

धार्मिक सहभागिता

महात्मा फुले कथानुसार ''धरती की सभी पवित्र पुस्तके मनुष्य द्वारा लिखी गई है।'' लेकिन मनुष्यों में महिलाओं द्वारा स्त्रियों द्वारा धार्मिक पवित्र पुस्तकों की रचना क्यों नहीं की गई है। क्या धर्म सिर्फ पुरूषों का है स्त्रियों का नहीं। स्त्रियों का धार्मिक इतिहास, धार्मिक सहभागिता में हमेशा से उपेक्षित रहा है, क्यों ? क्यों कि धर्म की उत्पत्ति पुरूष प्रधान व्यवस्था की इजाद है, जिसमें पितृसत्ता का अहंकार समाज की प्राथमिक इकाई परिवार में देखने को मिलता है। सभी मंदिरों, मस्जिदों, गिरिजाघरों गुरूद्वारों जैसे सिंहासनों की गद्दी में चहुँ–ओर पुरूष ही बैठे दिखाई पड़ते हैं, क्यों? इस पर स्त्रियों की सहभागिता पर सवाल तो छोड़िये इस पर विचार करना भी 'पाप' ठहराया गया है। यहाँ पर गंभीरता का प्रश्न चिन्ह है कि यदि महिलाओं को धार्मिक सिंहासनों की गद्दी पर बैठने की सहभागिता हो तो कहा जा सकता है कि धार्मिक साम्प्रदायिक हिंसा इस धरती से विलुप्त हो जाएगी।

सांस्कृतिक सहभागिता

पितृसत्तात्मक समाज की व्यवस्था जिस सांस्कृतिक संरचना की बुनियाद खड़ी की है, वह हजारों वर्षों की पुरानी सांस्कृतिक दीवार है। 20वीं सदी में महिलाओं को भले ही सभी संवैधानिक अधिकार मुहैया करायें गये हो, लेकिन इसके बाद उन्हें दोहरा संघर्ष करना पड़ रहा है। जिसके विकृत रूप ने घरेलू हिंसा, दहेज प्रताड़ना, वैवाहिक बलात्कार कार्य–स्थल पर यौन हिंसा से लेकर काम–काज के विभाजन में स्त्रियों के महिलाओं के लड़कियों के हिस्से में पूर्व–निर्धारित पूर्व ग्रहित निर्णय के साथ ही छोड़ दिया जाता है। लेकिन किसी भी हालात में उत्पीड़ित, शोषित, दबिश में जी रही महिलाओं के अन्याय के खिलाफ़ सांस्कृतिक आनदोलन स्वतंत्र नहीं है क्यों कि पितृसत्तातमक व्यवस्था की नीव परिवार की इकाई में ही खड़ी की जाती है। इसीलिए समाजशास्त्रियों का मानना है कि स्त्रिया पैदा नहीं होती समाज उन्हें वैसा बना देता है। यही कारण है कि स्त्रिया सांाकृतिक निर्णयों की सहभागिता में वंचित होंती हैं।

सामाजिक सहभागिता

सामाजिक सहभागिता पर वर्तमान में नारी वादी लेखकों ने इस बात पर विमर्श करने के लिए बढ–चढ़ कर हिस्सा लिया है कि जिस समय उन्हें सभी संवैधानिक अधिकार प्राप्त हो, उस समय भी निर्णय लेले के लिए फैसले करने के लिए स्वतः स्वतंत्र न होकर प्रत्यक्ष निर्णय लेने में उनकी सहभागिता न के बराबर है। वह भले ही परोक्ष निर्णय लेने के लिए परिवार पर छोड़ देती हो, लेकिन वासविकता यह है कि महिलाओं की सामाजिक सहभागिता सामाजिक इकाईयों में न के बराबर है। सामाजिक सहभागिता के उदाहरणों को कई रूपों में देखा जा सकता है। महिलाओं को क्या खाना है, क्या पीना है, क्या पहनना है, कहाँ उठना–बैठना है, किससे चर्चा–परिचर्चा करनी है? क्या रोजी–रोजगार करना है? किससे प्रेम–प्रसंग करना है? किससे शादी–विवाह करना है? बच्चे को जन्म देना है नहीं देना है, लड़की पैदा हो कि लड़का पैदा हो, सरोगेसी हो, टेस्ट–ट्यूब बेबी हो, से सभी बाते प्रत्यक्ष सामाजिक सहभागिता का उदाहरण न भी मालूम होता हो लेकिन परोक्ष सामाजिक सहभागिता में अवरोधक तत्व है।

आर्थिक सहभागिता

21वीं सदी की दुनिया में कितनी अमीर महिलाए हैं जिनका टक्कर पुरूष सत्ता के नामचीन लोगों में बिलगेट्स, अम्बानी बन्धु, अडानी, एलन मस्क से करता हो। क्या 21वीं सदी में महिलाओं की आर्थिक सहभागिता का कोई उदाहरण है? जिस सदीं में संवैधानिक आर्थिक सहभागिता का प्रतिनिधित्व करता हो, जो कानून पितृसत्ता की सम्पत्ति पर बेटियों का अधिकार दिया हो। लेकिन वास्तविकता यह है कि जन्म देने वाला पिता ही पुत्री को उपेक्षित रखता है। क्यो? स्त्रिया, महिलाए, लड़किया, बेटियां, नन्हीं परी के रूप में जिस तरह से परिवार में सामाजीकरण होता है उन्हें आर्थिक रूप से इस बात का एहसास हो जाता है कि बेटिया घर में भी पराई होती है। उनकी पढ़ाई में निवेश करना या दहेज देना कहीं ज्यादा जिम्मेदारी को निभाना आर्थिक सहभागिता को प्रदर्शित करने तक सिमेट दिया गया है क्यों कि पढ़ाई में निवेश करना पिता के अहंकार मान–सम्मान की प्रतिष्ठा धर्म–जाति की पहचान और उनकी सामाजिक स्वतंत्रता पर खतरा मडराने लगता है। इसलिए धर्म और संस्कृति दोनों ही स्त्रियों को पिता, भाई और पुत्र की आर्थिक निर्भरता और पुत्र की आर्थिक निर्भरता और संरक्षणता में रहना ही भारतीय संस्कृति की कायदा व बड़प्पन है।

राजनीतिक सहभागिता

विश्व में महिलाओं को लंबे समय तक मताधिकार जैसे अधिकरों से वंचित रखा गया। राजनीतिक निर्णय–निमार्ण में भी 20वीं सदी के पहले तक राजनीतिक सहभागिता में महिलाओं की उपस्थिति नगन्य ही रही है। शासन–प्रशासन में भागीदारी पर स्त्रियों की योग्यता पर हमेशा से सवान उठाये जाते रहे हैं। लोकतंत्र जो कि जनता द्वारा निर्मित है, ब्रिटेन में महारानी का राज करना तो सुनने में अच्छा एहसास भले ही करता हो। लेकिन वास्तविकता यह है कि राजनीति सहभागिता के कार्यसंचालन में महिलाओं की सहभागिता सुनिश्चित करने का संघर्ष अभी भी जारी है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि महिलाओं के लिए संस्थाओं समाजों में सहभागिता करना अभी भी चुनौती पूर्ण बना हुआ है। डा. अम्बेडकर का यह कथन की किसी भी राष्ट्र की प्रगति महिलाओं की प्रगति पर निर्भर करती है। यह आज भी प्रसांगिक बना हुआ है। सामाजिक क्षेत्रों में महिलाए आज भी स्वतत्र निर्णय लेने में अक्षम महसूस करती है।

राजनीतिक निर्णय निर्माण में सहभागिता अभी भी दुनिया के लोतंत्र में नाकाफी है। महिलाओं का धार्मिक सांस्कृतिक करण इस तरह से निर्मित किया जा रहा है। जिसमें उनमें तार्किक सोच का निर्माण ही न हो और वह एक शोषित वर्ग के रूप में ही अपना अस्तित्व बचाने में लगी रही है।

संदर्भ सूची

1. चतुर्वेदी, इनाक्षी एवं अग्रवाल, सीमा, महिला नेतृत्व एवं राजनीतिक सहभागिता, अविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर 2003 प्र. 15
2. राजस्थान पत्रिका, मार्च 8, 2016
3. योजना अप्रैल 2002
4. जोशी , आर . पी . एवं मंगलानी, रूपा (संपा.), पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की सहभागिता, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2000, पृ . 80
5. पंवार, मीनाक्षी, नारी उत्पीड़न और कानून, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1990, पृ . 188
6. लोकतन्त्रा समीक्षा, चुनाव में महिलाओं की सहभागिता, संयुक्त अंक, जनवरी – दिसम्बर , 2004
7. नायक, अशोक एवं द्विवेदी, हर्षित, पंचायत राज में ग्रामीण नेतृत्व, महिलाएं एवं राजनीतिक सहभागिता, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, 213, पृ . 133
8. प्रकृति, वीमैनपफीचर सर्विस, बुलेटिन, अंक 44, 15 जनवरी 2001, पृ . 2
9. सुशिला, पाटनी, वीमैन पॉलिटिकल एलीट सर्च पफॉर आइडेन्टिडी, जयपुर प्रिन्टवैल 1994
10. रंजन, राजीव, चुनाव लोकसभा और राजनीति ज्ञान गंगा, दिल्ली 2000, पृ . 350
11. पाटनी, सुशिला, वीमैन पॉलिटिकल एलीट सर्च आइडेन्टिटी, जयपुर, प्रिन्टवैल, 1994, पृ . 101
12. नारी और प्रतिक्रांति–डा.बी.आर.अम्बेडकर
13. क्रांति तथा प्रतिक्रांति–डा.बी.आर.अम्बेडकर
14. सावित्रीबाई फुले, काल आणि कर्तव्य (2006)–महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि संस्कृत मंडल, मुम्बई
15. बाबासाहेब डॉ.अम्बेडकर(संपूर्ण वाड्मय)–डा.अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली